

## न्यायिक आत्मानुशासन एवं न्यायिक सक्रियता के सन्दर्भ में

डा० धनपाल सिंह

प्रवक्ता, विधि अध्ययन विभाग

चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ।

सक्रिय न्यायपालिका, न्यायपालिका की परंपरागत भूमिका से भिन्न है। परम्परागत धारणा न्यायिक संयम की अवधारणा पर अवलम्बित है। यह अवधारणा अभिनिर्णय की प्रक्रिया में न्यायाधीश पर सीमाएँ आरोपित करती है। ये सीमाएँ आरोपित करती है। ये सीमाएँ ही न्यायाधीश के लिए लक्ष्मण रेखा की तरह है। इसे न्यायाधीश पार नहीं कर सकता। न्यायाधीश का काम है, संविधान और अधिनियम में प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या करना और उस व्याख्या में महत्व शाब्दिकता का है। इस अर्थ में प्रत्येक न्यायाधीश सक्रिय कहा जायेगा जो विधि की व्याख्या विकसित समाज में दायरे में करें। इस रूप में देखा जाये तो प्रत्येक न्यायाधीश सक्रिय होता है जिससे से कुछ लोग आगे की ओर अग्रसर होते हैं, और कुछ लोग पीछे की ओर। इस दृष्टिकोण से न्यायपालिका की परंपरागत अवधारणा एक भ्रम है। न्यायालय की परंपरागत अवधारणा न्यायाधीश की भूमिका को संकीर्ण बनाती है और सक्रियतावाद की अवधारणा उस भूमिका का विस्तार करती है।

न्यायिक प्रक्रिया में राजनीति अन्तर्निहित होती है। तीसरी दुनिया के विकासशील देशों में राजनीतिक चेतना का कोई ऐसा निश्चित रूप दिखाई नहीं पड़ता जो सामाजिक विकास को गति प्रदान कर सकें। तीसरी दुनिया में एक ऐसा राजनीतिक वर्ग सत्ता के केन्द्र में विद्यमान रहता है जो राज्य को व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में स्वीकार करता है। राज्य का सामान्य व्यक्ति यह आशा नहीं कर सकता है कि वह प्रशासन को प्रभावित कर सकता है। वह प्रशासन से न्याय की उम्मीद भी नहीं करता, दूसरी तरफ कार्यपालिका ही व्यक्ति के लिए अंतिम सहारा है। यह बेसहारा और शोषित जनों का अंतिम आशय है।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका संविधान के दायरे के अन्तर्गत ही है। न्यायाधीशों ने मनोयोगपूर्वक संविधान की रक्षा करते हुये सक्रियतावादी भूमिका प्रस्तुत की है। इसकी शुरुआत तो अन्य देशों में हो चुकी थी। जहाँ प्रारम्भ हुई थी, वहाँ विधिक और प्रशासनिक गत्यारोधों से निपटने के लिये न्यायपालिका ने सक्रियवादी समाधान प्रस्तुत किया। न्यायिक सक्रियतावाद मूल रूप में किसी भी न्यायाधीश की उन क्रियाओं से सम्बन्धित है जिसमें कोई न्यायाधीश किसी सीमा तक जाकर किसी विवाद का निर्णय करता है।

न्यायपालिका के सन्दर्भ में परंपरागत मत यह है कि यह राजनीति से ऊपर है अर्थात् न्यायाधीश का राजनीति से परे माना जाता है और उससे यह आशा की जाती है कि वह अपने आप को समाज के विभिन्न वर्गों से मुक्त रखे, क्योंकि राजनीतिक प्रवृत्ति किसी भी समाज को विभाजित करने करने का काम करती है। हर न्यायाधीश सक्रियवादी नहीं है, कुछ प्रगतिगामी हैं और कुछ प्रतिगामी। उनके अनुसार आगे या पीछे चलना दोनों का ही राजनीतिक महत्व है इसलिये न्यायाधीश और न्यायालय परोक्ष रूप से राजनीतिक भूमिका प्रस्तुत करते हैं। इसे न मानना न्यायालय के प्रति बचकानी दृष्टि (किंडरगार्टन ब्लू) है। फिर भी न्यायाधीश को विवादित राजनीतिक मुद्दों से अपने को मुक्त रखना चाहिए इसीलिये जब 'बिल ऑफ राइट' का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया तो उसकी बड़ी तीखी आलोचना हुई क्योंकि इसमें न्यायाधीश ने राजनीतिक रूप में काम किया।

लेकिन अब न्यायालय की परम्परागत अवधारणा बहुत सीमित हो गयी है। यदि कोई न्यायाधीश यह मानता है कि वह सक्रियवादी नहीं है तो निश्चित ही उसकी दृष्टि पुरातनगंभी है। विकासशील देशों में राजनीतिक चेतना इतनी सक्रिय नहीं है कि राज्य और उसके कर्मचारियों की स्वेच्छाचारिता पर सशक्त अंकुश लगा सके। ऐसी स्थिति में यह उत्तरदायित्व न्यायालय का है कि वे राज्य की स्वेच्छाचारिता से नागरिकों की रक्षा करें।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि न्यायाधीशों ने मनोयोगपूर्वक संविधान की रक्षा करते हुये सक्रियवादी भूमिका प्रस्तुत की है। दरअसल अकेले भारत में ही नहीं, बल्कि उदारवादी लोकतांत्रिक देश-संयुक्त राज्य और सीमाओं के भीतर कनाडा, इंग्लैण्ड और आस्ट्रेलिया में न्यायपालिका का सक्रियवादी रूप उभरा है। यह उन्मुक्ता देश की अपनी विशेषता नहीं है। यह एक प्रकार से सार्वभौम है। आत्मानुशासित न्यायाधीश भूमिका प्रधान होता है। यह है कि न्यायाधीश का परमकर्तव्य न्याय देना है। वह इस बात को सोचता है कि उसकी भी अपनी सीमा और मर्यादाएं हैं और जनता को उससे यह उम्मीद रहती है कि अपने कानूनी निर्णयों में वह आने वाली पीढ़ियों के लिये एक निर्बन्धन का काम करता है। अतः नियन्त्रण और सक्रियता के बीच एक अत्यंत क्षीण सीमा रेखा है। न्यायाधीश मार्शल भी इसी

समस्या से परिचित थे। उन्होंने निर्बन्धन और सक्रियता दोनों की बात किया, एक तरफ वो कहते थे: श्रनकपबपंस चवूमत एबवदजतंकपेपदहनपीमक तिवउ चवूमत वजीम सूंरें दव मगपेजमदबमणब्वनतजे तम जीम उंतम पदेजतनउमदजे वजीम सूंरें दक बंदूपसस दवजीपदहण दूसरी तरफ डब बनससवबी टे उंतलसंदक में यह कहा कि संयुक्त राज्य अमेरिका का कानून कि लिये है और परिणामस्वरूप मानवीय मामलों के विभिन्न क्षेत्रों में अंगीकृत किया जाना है।

यह सत्य है कि न्यायिक निर्बन्धन के समर्थक यह मानते हैं कि न्यायाधीश किसी शून्य में कार्य नहीं करते, वह अपना निर्णय एक निश्चित परिस्थितियों में देते हैं। उनके निर्णयों के पीछे ऐतिहासिक आधार होते हैं। निर्बन्धित न्यायाधीश भूमिका प्रधान होता है, वह अपने कर्तव्य की सीमाओं को जानता है। वह विश्वास करता है कि कानून निर्माण का कार्य विधायिका का है और विशिष्ट मामलों में लागू करने का कार्य न्यायपालिका का है। न्यायाधीश निश्चित वाद में निश्चित परिस्थितियों के अन्तर्गत परिणियम के अर्थ को स्पष्ट करने का प्रयास करता है और तदनुसार उस मामले को निस्तारण करता है। अर्थ प्रदान करने का अर्थ है— निर्वचन करना। निर्वचन परिणियम के अर्थ से सम्बन्धित है और अर्थान्वयन उसके प्रयोजन से। किसी भी वाद के लिये इन दोनों का महत्व है। लेकिन इन दोनों के बीच विभाजन की कोई स्पष्ट रेखा नहीं है और न ही हो सकती है, इससे समस्या उत्पन्न होती है। न्यायाधीश यह कह सकता है कि वह केवल परिणियम का निर्वचन कर रहा है जबकि वह इसकी सीमा के परे भी हो सकता है। टैंड व्पे ने यह निर्दिष्ट किया है कि “ज्जपे कर्पापिबनसज जव ममीमतम पदजमतचतमजंजपवद समंअमे वीं दक बवदेजतनबजपवद इमहपदेण्ड यह सब कुछ निर्धारित होता है न्यायाधीश पर कि वह किसी प्रकार से विधानमण्डल द्वारा बनाये गये कानून के आशय को समझता हैं शब्दों का अर्थ पूर्णतया अनिश्चित होता है। कोई भी परिणियम भावी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर परिणियम का निर्माण करती है। इसीलिए न्यायाधीश को परिणियम का निर्वचन करना पड़ता है जिससे कि उस परिणियम को भावी परिस्थिति के अनुकूल बनाया जा सकें। शब्दों का निर्वचन इस ढंग से किया जाता है कि जिससे वह आकस्मिक परिस्थितियों का सामना कर सकें। इस प्रकार के निर्वचन की कुछ समस्यायें हैं जो निम्न कारणों से उत्पन्न होती हैं:—

1. कोई भी विधि न तो संपूर्ण होती है और न ही सभी प्रकार की परिस्थितियों को आच्छादित कर पाती है।
2. विधानमण्डल के आशय को आशय को समझना अत्यंत कठिन कार्य है।
3. परिणियम की नीति परिणियम के आशय को स्पष्ट नहीं करती।
4. परिणियम में प्रयुक्त शब्द भिन्न-भिन्न अर्थ रखते हैं।

परिणामास्वरूप यह कहना अत्यन्त कठिन है कि किसी वाद के निर्णय में न्यायिक इच्छा सर्वोपरि है। न्यायिक निर्बन्धन को स्वीकार करने वाले इन समस्याओं को स्वीकार करते। श्रनेजपबम भ्वसउमे ने कहा कि ईपजीवनज मीपजंजपवद रनकहमे कव दक उनेज महेपेसंजम इनज जीमल बंद दवज कव वदसल पदजमतेजपजपंससलण एलेन का मानना है कि कानून बनाने की अपेक्षा कानून का निर्वचन करना न्यायाधीश का प्रमुख कार्य है। एलेन न्यायाधीश के कानून बनाने की शक्ति को सीमित मानते हैं। कानून बनाने का अर्थ कानून में रिक्त स्थानों की पूर्ति है। यहां तक कि निर्बन्धित न्यायाधीश को भी कानून के अन्तर्गत रिक्त स्थानों की पूर्ति एक बात होती है, और सीमाओं को लांघना तथा कानून का निर्माण करना दूसरी बात है। न्यायिक निर्बन्धन को मानने वालों ने कुछ निश्चित मापदण्ड निर्धारित किये हैं, उसे न्यायिक निर्बन्धन को मानने वालों ने कुछ निश्चित मापदण्ड निर्धारित किये हैं, उसे न्यायिक निर्बन्धन के सिद्धांत के रूप में जाना जाता है। ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं:—

1. ठवदंपिकमे वादियों के बीच कोई निश्चित मामला या विवाद होना चाहिए। न्यायालय को परिकल्पनात्मक विवादों में नहीं पड़ना चाहियें।
2. वाद दाखिल करने वाले पक्षकारों की परिस्थिति होनी चाहिए इसका तात्पर्य है कि—  
अ. व्यक्ति को किसी न किसी प्रकार की विधिक क्षति हुई हो।  
ब. उसे प्रथम दृष्टया साक्ष्य के साथ मामले का समर्थन करना चाहिए।
3. परिणियम और संविधान के बीच अन्तर का कथन स्पष्ट होना चाहिए।
4. न्यायालय को राजनीतिक प्रश्नों से विरत रहना चाहिए। न्यायालय को स्पष्ट रूप से अपने को राजनीति में अंतर्ग्रस्त नहीं करना चाहिए। लेकिन आज कल यह कठिन कार्य है। अतः निर्बन्धित न्यायाधीश के लिये यह अनुभव करना कठिन आदर्श है। फिर भी न्यायिक आत्मनिर्बन्धन विधिक और राजनीतिक प्रश्नों के बीच अन्तर पर बल देता है।
5. न्यायालय को हमेशा उस नियम जिसे चुनौती दी गयी है कि संवैधानिकता को उपधारित करना चाहिए, श्जीम बंतकपंदंस चतपदबपचंस वीं जंजनजवतलश में न्यायमूर्ति ह्यूग्स ने स्पष्ट भी किया है कि कानूनी अर्थान्वयन का प्रमुख सिद्धांत है बचाना न कि विनष्ट करना। परिणियम के दो मूल निर्वचनों में से एक के अनुसार यह

असंवैधानिक होगा और दूसरे के अनुसार वैधानिक। हमारा सरल कर्तव्य है कि उसे अंगीकृत करना जो वस्तुस्थिति का पोषक है या जो की कार्य को बचायेगा।<sup>10</sup> सामान्यतया तथा संवैधानिकता की उपधारणा होनी चाहिए या की जानी चाहिए। लेकिन यदि विधायिका राजनीतिक प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न करती हो तो ऐसी अवस्था में संवैधानिकता की इस अवधारणा का परित्याग किया जाना चाहिए।

6. यदि न्यायालय को संवैधानिकता का निर्णय करना है तो उसे सर्वप्रथम किसी एक धारा को असंवैधानिक करार करना चाहिए न कि पूरे परिनियम को।
7. यदि विवाद का निपटारा कानूनी आधार पर किया जाता है तो न्यायालय को यदा कदा ही संवैधानिक प्रश्नों को उठाना चाहिए। न्यायमूर्ति फ्रैंकफर्टर ने विवाद तब उठाया था जब उन्होंने यह विनिर्दिष्ट किया था कि प्रश्न सही नहीं है कि क्या आप मामले में जीत बिना किसी आधार के चाहते हैं, या आधार के। न्यायालय तो सबसे अन्त में संवैधानिक मुद्दों पर गौर करती है।<sup>11</sup>
8. ऐसा कभी भी संभव नहीं है कि न्यायालय विधायिका के अबुद्धिमत्तापूर्ण भाग की अभिपुष्टि कर सकता है जैसा संयुक्त राज्य अमेरिका में पूर्व शताब्दी में सिविल अधिकारों के मामलों में हो चुका है। बहुत से मामलों में इसने दोहरे मानक को स्वीकार किया है। दोहरे मानक की नीति सम्पत्ति और स्वतंत्रता के मामलों में अंतर पैदा करती है। यह एक अनुभवजन्य परीक्षा है। संयुक्त राज्य के सर्वोच्च न्यायालय के इतिहास में मार्शल से बर्गर तक यह देखा जा सकता है कि कैसे न्यायालय ने नागरिक अधिकारों के मामले में व्यापक दृष्टिकोण अपनाया था। व्यक्ति के अधिकारों की सुरक्षा करना यह एक प्रकार की राजनीतिक अभिवृत्ति है। अतः न्यायिक निर्बन्धन

एक प्रकार से न्यायालय को निश्चित प्रकार के कार्यों को करने की अनुमति प्रदान करता है।

न्यायिक निर्बन्धन एक प्रकार का रचनात्मक कार्य है। किसी भी न्यायाधीश

का यह कर्तव्य है कि वह परिनियमों की व्याख्या करें। राजनीतिक जीवन के बहुत से क्षेत्र ऐसे हैं जहां पर न्यायालय का न तो हस्तक्षेप है और न ही हस्तक्षेप करना चाहिए। न्यायिक आत्म निर्बन्धन का समर्थन इस आधार पर भी किया जाता है कि न्यायाधीशों से भी गलतियाँ हो सकती हैं, वह ऐसे नहीं कि प्लेटो के संरक्षक वर्ग की भाँति है। न्यायाधीश फ्रैंकफर्टर ने अपना दुःख व्यक्त करते हुये कपूर बनाम एरान में तथा यूनाइटेड बनाम यूनाइटेड माइन वर्कर्स के वाद ने कहा कि: 'मामद जीपे बवनतज' जीम सेंज'ल वदसल वित' जपउम इमपदह बवउचवेमक व' सिसपंड्सम उमदए पज उंल मतत' <sup>12</sup> इसलिए सजग पर्यवेक्षकों का यह मानना है कि जनता को न्यायपालिका से बहुत ज्यादा अपेक्षाएं नहीं करनी चाहियें। राजनीतिक दृष्टिकोण से न्यायिक निर्बन्धन अधिक लाभदायक है, विधानमण्डल सदैव विधि निर्माण की प्रक्रिया सम्पन्न करते समय विभिन्न पहलुओं की जांच करता है। यह उसका उत्तरदायित्व है। न्यायिक निर्बन्धन सरकार की विभिन्न शाखाओं के बीच संतुलन और समन्वय की वकालत करते हैं। यह बात करना कि न्यायालय एक राजनीतिक संस्थान है और वह लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के कार्यों का निर्वहन कर सकता है, बहुत समीचीन नहीं होगा। प्रश्न यह उठता है कि न्यायिक निर्वचन आपैर न्यायिक सक्रियतावाद के बीच रेखा कहां खींची जानी चाहिए? अब्राहम ने उचित रूप से निर्दिष्ट किया है कि

पूजी मअमतल सपदमए नमेजपवदए तपेम जवदमे जवीवूरीमतमए ममद दक इलीवउ पज'सस इम कतूंद (हेनरी जे अब्राहम दि सुप्रीम कोर्ट इन दी इवाल्विंग पोलिटिकल प्रोसेस) ऐसी तमाम परिस्थितियाँ हैं जो कठोर वर्गीकरण को स्वीकार नहीं करती। कुल मिलाकर यह है कि न्यायिक आत्मनिर्बन्धन स्वयं अधिरोपित परिसीमा है। यह कानून की पढ़ी जाने वाली परम्परा द्वारा कायम रखा जाता है। आखिर परम्परा में क्या शामिल है? अब्राहम का स्पष्ट उत्तर है न्यायिक सत्यनिष्ठा का पालन करने वाला भाव प्रक्रियात्मक नियमों के लिये आवश्यक सम्मान विधि के समक्ष समान व्यवहार का विचारण, विधायी अधिनियमों को दर्शाने वाला अन्तर, सांस्कृतिक, वैचारिक और संस्थापक व्यवस्था की वास्तविकताओं को न्यायिक मान्यता जिसका न्यायाधीश नागरिकों के साथ भागीदारी करता है।

सक्रियतावाद ने केवल विधि के अन्तराल को भरता है बल्कि यह कार्यपालिका द्वारा नियोजित सकारात्मक कार्यों की योजना की भी रिक्तता को भरता है। इस रूप में न्यायपालिका संवैधानिक उद्देश्यों और संवैधानिक जनादेश की पूर्ति का प्रयास करता है। सक्रियतावाद का जो स्वरूप अमेरिका में था वह नकारात्मक और सम्पत्ति से सम्बन्धित था किन्तु वारेन कोर्ट द्वारा जिस सक्रियतावाद की स्थापना हुई वह सकारात्मक और गैर आर्थिक अधिकारों पर आधारित है। सकारात्मक सक्रियतावाद ने यह दर्शाया है कि कैसे राजनीतिक निकाय राजनीतिक व्यक्ती है। इसलिए न्यायालय न्यायिक विधायन द्वारा नेतृत्व प्राप्त करने में सर्वसम्मति को आधार बनाते हैं। वास्तव में यह सर्वसम्मति लोगों में निष्क्रिय है। न्यायालय का निर्णय उसे उत्प्रेरित करता है। वालेन मिन्डेल्सन ने उचित रूप से यह निर्दिष्ट किया है कि: 'मजमबज जीम'वबपंस वितबमे जीज कमजमतउपदम मसमबजपवद दक वजीमत उंरवत चवसपजपबंस' मजजसमउमदज छव ब्वनतज बंद सवदह पूजी'जंदक जीम उवतंस व'पज पे मतं छमउवबतंबल पद ।उमतपबं मे

जनता की शक्ति का न्यायालय की शक्ति के साथ समीकरण को चिन्हित किया है। वास्तव में न्यायालय केवल लोक भावना को प्रकट ही नहीं करता बल्कि उसे सृजित भी करता है।

अब्राहम ने तो न्यायालय की वकालत एक कदम आगे बढ़कर इस तरह से किया है: जैम तवसम 'जमबीमतए' डवनसकमत दक पददवअंजवत न्यायालय को जनमानस की भावना का ध्यान रखकर की निर्णय करना चाहिए अन्यथा इसका विरोध हो सकता है।

जब कभी न्यायालय लोकनीति के बारे में कुछ कहता है तो यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह न्यायोचित है? तो एक बार पुनः इसका उत्तर संविधान की भावना का सहारा लेता है। न्यायालय ऐसा करता भी है क्योंकि वह प्रत्येक पहलू को ध्यान में रखता है। वास्तव में न्यायालय अपना कदम वहाँ रख चुकी है जहाँ विधानमण्डल काम करने की हिम्मत नहीं कर सकता। बहुधा राजनीतिज्ञ लोकनीति की वांछनीयता महसूस करते हैं। किन्तु वे इस बात से डरते हैं कि ऐसा मान लेने से उनका राजनीतिक भविष्य खतरे में पड़ सकता है। यह कहना अत्यन्त विरोधाभासी होगा कि कभी-कभी सरकार के अन्य दलों के नेता यह चाहते हैं कि न्यायालय व्यापक रूप से सक्रिय हो। न्यायालय की भूमिका इस पृष्ठभूमि में प्रशंसनीय हो सकती है। तो क्या इसका अर्थ है कि सक्रियतावाद न्यायालयों को सुधार करने के मंत्र रूप में परिवर्तित करता है। स्पष्टता: न्यायालय जो करते उसे देखकर तो ऐसा ही लगता है। गौर करने की बात यह है कि आर्चिबाल्ड काक्सस ने अपनी पुस्तक का नाम ही जैमततमद ब्यनतजरु बवदेजपजनजपवदंस वमबपेपवद'ए पदेजतनउमदज वत्तिवितउण रख दिया। परम्परावादियों को न्यायालय का यह बदला स्वरूप स्वीकार करने में बहुत अधिक कठिनाई महसूस होती है, किन्तु परिस्थितियों ने न्यायालय को इस प्रकार की भूमिका निभाने के लिए मजबूर कर दिया। न्यायालय को ऐसे लोगों के प्रति सहानुभूति हानी चाहिए। जो अपने को समाज में दुःखी और अपमानित महसूस करते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के 60 वें दशक में अत्यन्त ऊहापोह की स्थिति थी, किन्तु उतने महत्वपूर्ण उपलब्धियों को समेकित किया। आज 21 वीं सदी में प्रशासनिक विधि का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक और समृद्ध है। सार्वजनिक क्रियाकलाप को प्रायः प्रशासन से संघर्ष करना पड़ता है। अपने अधिकारों के समर्थन के लिए नागरिकों को न्यायपालिका का सहारा लेना पड़ता है। न्यायिक सक्रियतावाद की पुरानी पद्धति नकारात्मक तथा विधिक और संवैधानिक कार्यों से सम्बन्धित थी। नागरिकों को दी जाने वाली राहत को प्रशासन की दया पर छोड़ दिया जाता था। इस प्रकार सक्रियतावाद की पुरानी पद्धति बहुत लम्बे समय तक नागरिकों के लिए सहायक सिद्ध नहीं हुई। प्रगतिशील कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। इस रूप में न्यायालय नागरिकों को सकारात्मक राहत और उनके अधिकारों को वास्तविक स्वरूप प्रदान करती है।

## संदर्भ

1. उपेन्द्र बक्शी, "दी इण्डियन सुप्रीम कोर्ट एण्ड पॉलिटिक्स", ईस्टर्न बुक कम्पनी लखनऊ 1980, पृ0संख्या:28
2. थॉमस रीड पावेल "वेगेरीज एण्ड वेरायटीज इन कांस्टीट्यूशनल इन्टरप्रेटेशन", कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस 1980, पृ0संख्या:26
3. उपेन्द्र बक्शी "दी इण्डियन सुप्रीम कोर्ट एण्ड पॉलिटिक्स", ईस्टर्न बुक कम्पनी लखनऊ 1980, पृ0संख्या:28
4. जान बेल, "पॉलिसी आर्गुमेन्ट इन जूडिशियल डिसेजन्स", क्लेरेन्डर प्रेस, आक्सफोर्ड, 1983, पृ0संख्या:2
5. हेनरी जे0 अब्राहम, "दि ज्यूडीशियल प्रासेस," ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस देलही, 1976, पृ0संख्या:322
6. अलेक्जेंडर बिकेल, "दी सुप्रीम कोर्ट एण्ड दि आइडिया ऑफ प्रोग्रेस," हार्पर एण्ड रो, न्यूयार्क, 1970, पृ0संख्या:20
7. हेनरी जे0 अब्राहम, "दि ज्यूडीशियल प्रासेस, " ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस देलही, 1978, पृ0संख्या:51
8. आर0 डब्लू0 एम0 डायस, "ज्यूरिस्प्रुडेन्स" पाँचवा संस्करण वटरवर्थस् लंदन, 1985, पृ0संख्या:167
9. हेनरी जे0 अब्राहम "दि ज्यूडीशियल प्रासेस, " ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस देलही, 1978, पृ0संख्या:322
10. टिप्पणी संख्या:7 पृ0संख्या:370